स्थिरता के साथ वृद्धि प्राप्त करने में मौद्रिक नीति की भूमिका: भारतीय अनुभव *

वाई.वी. रेड्डी

गवर्नर गार्गनास ने ग्रीस आने और ग्रीस के केंद्रीय बैंक में व्याख्यान देने के लिए के लिए निमंत्रित किया, इसके लिए मैं स्वयं को सम्मानित अनुभव करता हूं। ग्रीस तथा भारत के बीच संबंध कम-से-कम 2000 वर्ष पुराना है। ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में पाटलिपुत्र के चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में ग्रीक राजदूत मेगास्थनीज का उल्लेख मिलता है। भारतीय रिज़र्व बैंक के मौद्रिक संग्रहालय में कुछ ऐसे सिक्के हैं जिनसे यह ज्ञात होता है कि भारत और ग्रीस के बीच 2000 वर्ष से भी पूर्व घनिष्ठ व्यापारिक संबंध था। व्यक्तिगत रूप से मेरे लिए यह एक बड़ा ही आनन्द का क्षण है कि मैं सुकरात, प्लेटो तथा अरस्तू के देश में हूं । इनके दर्शन के प्रति मेरी गंभीर रुचि ने मुझे 40 वर्ष पूर्व न केवल लोक सेवा परीक्षा उत्तीर्ण करने में सहायता पहुंचायी, बल्कि मुझे अपने तौर पर ज्ञान प्राप्त करने तथा सच्चाई को जानने का अवसर भी प्रदान किया। मैं इस महान देश के प्रति कृतज्ञ हूं जिसने हमें ज्ञान तथा अंत:प्रेरणा का उपहार दिया जो आज भी हमारा मार्गदर्शन कर रहा है।

आज का मेरा व्याख्यान एक ऐसे विषय पर है जो न केवल पारंपरिक रूप से केंद्रीय बैंकर का अति प्रिय विषय रहा है बल्कि बाजार के एकीकरण तथा वैश्वीकरण के संदर्भ में इसका महत्व और बढ़ा है। मैं अपने व्याख्यान में भारत में हुई उल्लेखनीय और तेज वृद्धि, मुद्रास्फीति तथा मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं के नियंत्रण तथा वित्तीय स्थिरता के आश्वासन के संबंध में संक्षेप में बताऊंगा। इस बात को स्वीकार करते हुए कि इसमें कई कारकों की भूमिका रही है, मैं इस जटिल प्रक्रिया में मौद्रिक नीति की भूमिका पर प्रकाश डालना चाहूंगा ।

1. प्रभावशाली तथा तीव्र वृद्धि के साक्ष्य

1980-81 (भारत में वित्तीय वर्ष 1 अप्रैल से 31 मार्च तक होता है) से पिछले 25 वर्षों में भारतीय

* बैंक ऑफ ग्रीस में 2 अप्रैल 2007 को भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर डॉ. वाई.वी. रेड्डी द्वारा दिया गया भाषण।

अर्थव्यवस्था की औसत वृद्धि दर 6 प्रतिशत रही जो 1950-51 से 1979-80 के दौरान पिछले 3 दशकों में हुई 3.5 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर की तुलना में काफी महत्वपूर्ण है। हाल के वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था पिछले तीन वर्षो में 8.6 प्रतिशत की औसत वृद्धि दर के साथ एक ऐसे दौर में प्रवेश कर गयी है जिसे उच्च वृद्धि दर का दौर कहा जा सकता है। पिछले 2 वर्षों में औसत वृद्धि दर 9.1 प्रतिशत रही। सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि तेज हुई, जबकि जनसंख्या वृद्धि की दर में कमी आई। इन सबका सामग्रिक असर यह हुआ कि प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद में बढ़ोतरी हुई। उदाहरणस्वरूप, 1970 के दशक में भारत की प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि की दर 0.6 प्रतिशत थी, जिसका निहितार्थ यह हुआ कि कोई व्यक्ति अपने जीवनकाल में अपनी आय दुगुनी होता हुआ नहीं देख पाएगा । 1990 के दशक से प्रति व्यक्ति आय 4.0 प्रतिशत औसत दर से बढ़ रही है जिसका अर्थ है कि किसी व्यक्ति विशेष की आय लगभग 18 वर्षों में दुगुनी हो जाएगी। यदि किसी व्यक्ति की प्रत्याशित आयु 72 वर्ष है तो उसके वयस्क जीवनकाल में उसकी आय में 3 बार दुगुनी वृद्धि होगी। यदि लगभग 9 प्रतिशत की चालू सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर बनी रहती है तो उस व्यक्ति के जीवनकाल में उसकी आय में लगभग 5 गुना वृद्धि होगी।

भारत में पिछले डेढ़ दशक में आर्थिक वृद्धि का उल्लेखनीय पहलू है उसकी स्थिरता। यह इस बात से प्रमाणित होता है कि सुधार से पूर्व अर्थात् 90 के दशक से पूर्व की अवधि की तुलना में सुधार के बाद की अवधि में वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद का विचरण गुणांक (कोइफिशॅन्ट ऑफ वैरिएशन) काफी कम रहा है। यह बात भी उल्लेखनीय है कि भारत की वृद्धि में घरेलू खपत की भूमिका महत्वपूर्ण रही है तथा सकल मांग का औसतन लगभग दो-तिहाई हिस्सा इसी का है। साथ ही, निवेश तथा निर्यात संबंधी मांग भी बढ़ी है। चूंकि खपत मांग का कम अस्थिर हिस्सा है, इसलिए सकल घरेलू उत्पाद में अत्यधिक उतार-चढ़ाव नहीं हुए। अर्थव्यवस्था ने हाल के वर्षों में तेल की कीमतों में उतार-चढ़ावों को झेला है। देश के चालू खाते में इस समय सामान्य घाटे की स्थिति है जबकि कुछ वर्ष पहले तक अधिकता की स्थिति थी। भारतीय अर्थव्यवस्था की बढ़ती प्रतिस्पर्धात्मक रुख को उजागर करते हुए व्यापारिक वस्तुओं का निर्यात पिछले 3 वर्षों से प्रति वर्ष 25 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है । साथ ही, विदेश स्थित कर्मचारियों द्वारा भेजे गये प्रेषण तथा सॉफ्टवेयर के निर्यात के चलते अगोचर मदों से प्राप्त निवल राशि की मात्रा बढ़ी है।

हाल के वर्षों में आर्थिक कार्यकलापों में जो वृद्धि हुई है उसका कारण घरेलू निवेश दर में लगातार वृद्धि तथा पूंजी का कुशल उपयोग किया जाना है। 2001-02 में घरेलू निवेश दर स.घ.उ. का 22.9 प्रतिशत थी, जो 2005-06 में बढ़कर 33.8 प्रतिशत हुई। इसी अवधि में घरेलू बचत दर 23.5 प्रतिशत से बढ़कर 32.4 प्रतिशत हुई। सार्वजनिक तथा निजी कंपनियों की बचत की स्थिति में सुधार होने के चलते यह संभव हुआ।

2. मुद्रास्फीति तथा मुद्रास्फीति की प्रत्याशा को नियंत्रित करना

1950 के दशक की 1.7 प्रतिशत औसत वार्षिक मुद्रास्फीति की दर 1960 के दशक तक आते-आते 6.4 प्रतिशत हो गयी तथा 1970 के दशक में यह 9.0 प्रतिशत थी। परंतु 1980 के दशक में यह दर थोड़ा घटकर 8.0 हुई । भारत में सामान्यतः बेलगाम(रनअवे) मुद्रास्फीति की स्थिति नहीं पायी गयी है । दूसरी ओर, 1950 के दशक में मुद्रास्फीति के उतार-चढ़ाव की दर, जिसे विचरण गुणांक के जरिए मांपा जाता है, 4.4 पर

काफी अधिक था । परंतु, मुद्रास्फीति जोखिम प्रीमियम कम होने के चलते बाद के दशकों में यह गुणांक 0.4 से 1.0 के बीच रहा। 1970 के दशक से मुद्रास्फीति की दर में जो वृद्धि हुई वह मुख्यतः मुद्रा की आपूर्ति की अत्यधिक वृद्धि दर और अंशतः कच्चे तेल की कीमतों तथा फसल की हानि के कारण आपूर्ति के क्षेत्र में आई अकस्मात कमी को परिलक्षित करती है। अंशत: बढ़ते राजकोषीय असंतुलन के कारण मांग के क्षेत्र में जो दबाव बना उसके कारण 1980 के दशक में मुद्रास्फीति का दबाव बना। सुधरे हुए मौद्रिक तथा राजकोषीय अंतर-संबंधों के चलते 1990 के दशक के उत्तरार्ध में स्थिति में बदलाव आया और मुद्रास्फीति की बढ़ती दर में कमी आई।

मुद्रास्फीति की दर 1990-95 के दौरान के औसत 11.0 प्रतिशत से घटकर 1990 के दशक के उत्तरार्ध में 5.3% हुई। बाहर से पूंजी के लगातार आने तथा तेल की कीमतों में लगातार वृद्धि के बावजूद 1990 के उत्तरार्ध में मुद्रास्फीति की दर कमोबेश सामान्य रही। यह समुचित समष्टि आर्थिक तथा मौद्रिक प्रबंध तथा व्यापार में खुलापन आने के चलते संभव हुआ। इस अवधि में मुद्रास्फीति की औसत दर 5.0 प्रतिशत के आसपास बनी रही जोकि पिछले साढ़े तीन दशक पूर्व के लगभग 8.0 प्रतिशत की तुलना में काफी कम है। 2005-06 के दौरान औसत हेडलाइन मुद्रास्फीति की दर लगभग 4.5% रही तथा आपूर्ति संबंधी कतिपय प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद मुद्रास्फीति की प्रत्याशा सुनियंत्रित रही।

हाल की अवधि में थोक मूल्य सूचकांक के आधार पर मापी जानेवाली हेडलाइन मुद्रास्फीति की दर जनवरी-मार्च 2007 के दौरान 6.0 प्रतिशत रही। 10 मार्च 2007 को समाप्त हुए सप्ताह में यह दर 6.46% थी। तथापि, अप्रैल 2006 से 10 मार्च 2007 तक की अवधि में मुद्रास्फीति की औसत दर 5.3 प्रतिशत थी। यहां इस बात का ध्यान रखना उचित होगा कि अन्य विकासशील देशों की तुलना में, विशेषत: लोकतांत्रिक दबावों के चलते मुद्रास्फीति की सहनीयता का स्तर ऐतिहासिक रूप से काफी कम रहा है।

इस संदर्भ में मैं विश्व बैंक के सादिक अहमद की हाल की पुस्तक 'इंडियाज लांग टर्म ग्रोथ एक्सपिरिअन्स' से उद्धरण प्रस्तुत करना चाहूंगा जिसमें 1950 से 1980 (चरण-I) तथा 1980 से अब तक (चरण-II), दो चरणों में भारत में वृद्धि के अनुभव का विश्लेषण किया गया है :

> ''समग्र रूप में, भारत में दोनों चरणों में मुद्रास्फीति की दर विश्व की समग्र दर तथा तेल निर्यात न करने वाले विकासशील देशों की मुद्रास्फीति की दर से काफी कम रख पाना मौद्रिक नीति के सफल संचालन को प्रमाणित करता है। यह सुधार इसलिए भी उत्साहजनक है कि पहले चरण के बंद आर्थिक परिवेश की तुलना में दूसरे चरण में, जब इसने अर्थव्यवस्था को खोल दिया, भारत ने कई बाह्य आघातों तथा आयातित मुद्रास्फीति के संबद्ध प्रतिकूल प्रभावों का भी सामना किया।''

3. वित्तीय स्थिरता का आश्वासन

वित्तीय स्थिरता के संबंध में बाहरी तथा घरेलू आघातों को सहने की अर्थव्यवस्था की शक्ति उल्लेखनीय है। खाड़ी युद्ध के चलते 1991 में भारत ने भुगतान संतुलन के प्रमुख संकट का सामना किया जिसे घरेलू तथा बाहरी दोनों क्षेत्रों पर समष्टि आर्थिक तथा ढांचागत सुधार तथा स्थिरीकरण कार्यक्रम के जरिए हल किया गया। सुधारों के चलते निरंतर वृद्धि की स्थिति बनी रही क्योंकि बाहरी आघातों को सहने की शक्ति

अर्थव्यवस्था में आ गयी थी। यह इस बात से भी प्रमाणित होता है कि बाद के वर्षों में पूर्वी एशियाई संकट, 1997-98 के दौरान का रूस का संकट, पोखरान परीक्षण (आणविक परीक्षण) परिदृश्य के बाद के आर्थिक प्रतिबंध तथा मई-जून 1999 के सीमा-विवाद जैसी घटनाओं के कारण होने वाली प्रतिकूल स्थितियों से सफलतापूर्वक निपटने में हम सफल रहे। 1990 के दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था में, वास्तविक अर्थव्यवस्था तथा वित्तीय क्षेत्रों पर गंभीर असर डाले बिना ऐसे झटकों को सहने की शक्ति आ गई थी।

1990 के दशक में अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के हलचल भरे वित्तीय क्षेत्रों को देखते हुए वित्तीय स्थिरता के क्षेत्र में भारत का रिकार्ड विशेष रूप से उल्लेखनीय है। साथ ही, घरेलू वित्तीय बाजारों के विभिन्न खंड सामान्यतः स्थिर रहे। वित्तीय स्थिरता की दृष्टि से एक ऐसी वित्तीय प्रणाली का होना जरूरी है जिसमें विवेकपूर्ण नीतियों तथा प्रथाओं द्वारा पोषित स्थिर, प्रतिस्पर्धी तथा कुशल वित्तीय संस्थाओं के साथ वित्तीय बाजारों की व्यवस्थित कार्यप्रणाली सुनिश्चित की जा सके। हमने पाया है कि भारतीय बैंकों के तुलनपत्रों में काफी सुदृढ़ता आई है, वित्तीय बाजारों की सघनता और व्यापकता बढ़ी है तथा तत्काल सकल निपटान प्रणाली (आरटीजीएस) के लागू हो जाने के बाद भुगतान प्रणाली भी काफी सुदृढ़ हुई है।

4.मौद्रिक नीति की भूमिका

यहां यह उल्लेख करना समुचित होगा कि भारतीय अर्थव्यवस्था का कार्य-निष्पादन समग्र रूप में सुदृढ़ तथा स्थिति के अनुकूल रहा। इसका कारण विभिन्न क्षेत्रों में किए गए आर्थिक सुधार है जिसके कारण प्रणाली में समग्र रूप में कुशलता तथा प्रतिस्पर्धा बढ़ी है। इसके लिए मौद्रिक नीति के संचालन की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही, क्योंकि इन नीतियों के चलते स्थिरता, जिसमें समष्टि आर्थिक, मूल्य तथा वित्तीय स्थिरता शामिल है, सहित वृद्धि का लक्ष्य काफी हद तक पूरा करने में सफलता मिली। मौद्रिक नीति का सकारात्मक योगदान इसलिए संभव हुआ क्योंकि बदलते आर्थिक परिवेश तथा संदर्भों के अनुसार मौद्रिक नीति के ढांचागत रूप की समीक्षा एवं उसमें लगातार सुधार किया जाता रहा। मैं उभरती बाजार अर्थव्यवस्था में, जोकि क्रमिक परन्तु उल्लेखनीय रूप से मुक्त बाजार की ओर अग्रसर हो रही है, मौद्रिक नीति के संचालन संबंधी अनुभवों के विभिन्न पहलुओं के बारे में चर्चा करना चाहूंगा।

(क) लक्ष्यों में गतिशीलता: वृद्धि तथा स्थिरता

भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 की भूमिका में भारतीय रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीति के लक्ष्य के बारे में मोटे तौर पर यह कहा गया है : 'बैंक नोटों के निर्गम को नियंत्रित करना तथा भारत में मौद्रिक स्थिरता प्राप्त करने के लिए आरक्षित निधि रखना एवं देश के हित को ध्यान में रखते हुए मुद्रा तथा ऋण प्रणाली को परिचालित करना'। मैं इस विषय को और स्पष्ट करने के लिए मेरे विशिष्ट पूर्ववर्ती गवर्नर तथा हाल ही में प्रधानमंत्री के आर्थिक सलाहकार परिषद के अध्यक्ष डॉ.सी.रंगराजन के शब्दों को उद्धृत करना चाहूंगाः

- 'व्यापक रूप में देखें तो मौद्रिक नीति का लक्ष्य, आर्थिक नीति के समग्र लक्ष्य से भिन्न नहीं है। भारत में मौद्रिक नीति के प्रमुख लक्ष्य ये रहे हैंः (1)मूल्य स्थिरता को समुचित सीमा तक बनाए रखना तथा (2) आर्थिक वृद्धि दर को बढ़ाने में सहायता करना। इन दो लक्ष्यों में से किसे अधिक बल दिया जाए इस बात का निर्धारण वर्ष के दौरान के तथा उससे पूर्व के वर्ष की स्थिति को ध्यान में रखते हुए किया जाता रहा ।'

यद्यपि, विभिन्न देशों में प्रचलित प्रथा के विपरीत, मूल्य स्थिरता के संदर्भ में भारत में कोई स्पष्ट अधिदेश नहीं है। मूल्य स्थिरता बनाए रखना तथा अर्थव्यवस्था के उत्पादनकारी क्षेत्रों में ऋण के पर्याप्त प्रवाह को सुनिश्चित करना, भारत में मौद्रिक नीति के दो प्रमुख लक्ष्यों के रूप में उभरे हैं। दूसरा लक्ष्य निवेश तथा निर्यात मांग को समर्थन देने के लिए पर्याप्त तथा उपयुक्त चलनिधि सुनिश्चित कर वृद्धि करने की बात पर बल देता है। मूल्य स्थिरता तथा आर्थिक वृद्धि में से किसे वरीयता दी जाए यह इस बात पर निर्भर करता है कि उस समय की परिस्थितियां किस प्रकार की हैं तथा इसके संबंध में रिज़र्व बैंक के नीतिगत वक्तव्य में समय-समय पर स्पष्ट रूप से उल्लेख किया जाता है। हाल के वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था में आए खुलेपन के कारण समष्टि आर्थिक तथा वित्तीय स्थिरता का मुद्दा महत्वपूर्ण हो गया है।

(ख) नीतिगत ढांचे में परिवर्तन

1980 के दशक के मध्य से तथा 1997-98 तक मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण का ढांचा लागू था जिसमें व्यापक मुद्रा ($एम_3$) को एक मध्यवर्ती लक्ष्य के रूप में रखा गया। इसका लक्ष्य दो प्राचलों - (क) वास्तविक आय में संभावित वृद्धि तथा (ख) मुद्रास्फीति की पूर्वानुमानित अथवा सहनीय दर को ध्यान में रखते हुए मुद्रा की आपूर्ति में वृद्धि को निर्धारित करना था । इन दो प्राचलों के आधार पर लक्षित मौद्रिक विस्तार तय किया जाता था । परंतु, व्यवहार में, वास्तविक क्षेत्र में हुई गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण के ढांचे को काफी लचीलेपन के साथ प्रयोग में लाया गया।

वित्तीय क्षेत्रों में हुए सुधारों तथा अर्थव्यवस्था में आए खुलेपन के चलते मुद्रा, उत्पादन तथा मूल्यों के अंतर-संबंधों में आए परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए इसकी एक समीक्षा आवश्यक हो गई थी। तदनुसार मेरे पूर्ववर्ती विशिष्ट गवर्नर डॉ. विमल जालान द्वारा तैयार किये गये नीतिगत ढांचे के अनुसार उनके मार्गदर्शन में 1998-99 में भारतीय रिज़र्व बैंक ने बहु संकेतक दृष्टिकोण अपनाया । इस दृष्टिकोण के अनुसार ब्याज दर अथवा विभिन्न बाजारों (मुद्रा, पूंजी तथा सरकारी प्रतिभूति बाजार) में प्रतिलाभ की दर तथा अधिक बारंबारता वाले आंकड़े जैसे - प्रचलन में मुद्रा, बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं द्वारा दिये गये ऋण, राजकोषीय स्थिति, व्यापार संतुलन, पूंजी उपलब्धता, मुद्रास्फीति की दर, विनिमय दर, विदेशी मुद्रा में लेनदेन तथा वित्तपोषण आदि की तुलना उत्पादन की प्रवृत्ति के साथ की जाती है ताकि उनसे नीतिगत सोच के बारे में जानकारी मिल सके। आंतरिक रिपोर्टिंग में लगने वाले समय तथा संभावित उत्पादन एवं बेरोजगारी संबंधी संकेतकों की कमियों सहित मुद्रास्फीति के संकेतकों की बदलती विश्वसनीयता के स्तर को देखते हुए हमारा अधिक प्रयास सूचनाओं के मात्रात्मक तथा गुणात्मक स्तर में सुधार लाने पर है ।

(ग) परिचालन प्रक्रिया का सुसंगतीकरण

भारत में मौद्रिक नीति की परिचालन प्रक्रिया के संबंध में प्रत्यक्ष साधनों पर निर्भरता कम की गई है और अप्रत्यक्ष साधन चालू मौद्रिक नीति परिचालनों का आधार बन गए हैं। प्रणाली में चलनिधि का प्रबंध खुले बाजार के परिचालनों के माध्यम से किया जाता है जो चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) के अंतर्गत दैनिक रिवर्स रिपो और रिपो परिचालनों और सरकारी प्रतिभूतियों के तत्काल क्रय/विक्रय के रूप में होता है। एलएएफ के माध्यम से रिज़र्व बैंक भारी पूंजी अंतर्वाहों सहित वित्तीय बाजार की बदलती स्थिति में अल्पावधि चलनिधि को अनुकूल कर सकता है। इसके अलावा, इसके आधार

पर रिज़र्व बैंक नीति के रुख के अनुरूप अल्पावधि ब्याज दरों के लिए यथासंभव एक अनौपचारिक दायरा बनाने में भी समर्थ हुआ है। इससे चलनिधि दबाव बढ़ाए बिना सांविधिक पूर्व निर्धारणों के स्तरों में कमी करना भी सुकर हुआ है। रिज़र्व बैंक की स्थायी निर्यात ऋण पुनर्वित्त सुविधा तक सीमित रूप में पहुंच और प्राथमिक व्यापारियों को चलनिधि सहायता देना उक्त परिचालनों के अनुपूरक होते हैं ।

परिचालन के इस नए वातावरण में मौद्रिक नीति के संचालन में रिज़र्व बैंक की निर्भरता आवश्यकतानुसार बाजार आधारित साधनों और आरक्षित निधि संबंधी आवश्यकताओं में परिवर्तन के संयुक्त रूप पर बढ़ती जा रही है। अपने एलएएफ, जिसके तहत केंद्रीय बैंक अन्य बैंकों के लिए दैनिक नीलामी संचालित करता है, के संचालन के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा समय-समय पर निर्धारित नियत रिवर्स रिपो /रिपो दरों में परिवर्तन भारतीय अर्थव्यवस्था में ब्याज दरों के संकेत के मुख्य साधन के रूप में उभरा है।

रिज़र्व बैंक ने बाजार के सहभागियों के बीच के अल्पावधि चलनिधि असंतुलनों को सुरक्षित और सहज रूप से दूर करने के लिए मुद्रा बाजार के संपार्श्विकीकृत घटक के विकास को भी सक्रिय रूप से प्रोत्साहन दिया है। संपार्श्विकीकृत बाजार के दो प्रकार उभरे हैं - पहला, रिपो बाजार और दूसरा संपार्श्विकीकृत उधार लेने और देने का दायित्व (सीबीएलओ) । उक्त दूसरा प्रकार एक अनूठा उत्पाद है जो तृपक्षीय रिपो जैसा होता है। भारतीय समाशोधन निगम लि. (सीसीआइएल) केंद्रीय प्रतिपक्ष के रूप में कार्य करता है और बाजार सहभागियों के बीच संपार्श्विकीकृत उधार लेनदेन में सहायता करता है।

2004 में बाजार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) शुरू करके चलनिधि प्रबंधन को पुनः सुधारा गया जिसके अंतर्गत भारी पूंजी अंतर्वाह और चलनिधि की प्रचुरता की स्थिति में रिज़र्व बैंक को चलनिधि कम करने के कार्य के एक भाग के रूप में सरकारी प्रतिभूतियां जारी करने की अनुमति दी गई थी। ये निर्गम बजट सहायता उपलब्ध नहीं कराते हैं, किंतु इसमें ब्याज लागत राजकोष द्वारा वहन की जाती है; जहां तक सरकारी प्रतिभूति बाजार का संबंध है, इन प्रतिभूतियों की भी ट्रेडिंग अन्य सरकारी स्टॉक के समतुल्य द्वितीयक बाजार में की जाती है।

संक्षेप में, रिज़र्व बैंक वर्तमान में अपने मौद्रिक परिचालन में बहुविध साधन उपयोग में लाता है ताकि ब्याज दर नीति और मूल्य स्थिरता के लक्ष्य के अनुरूप प्रणाली में उपयुक्त चलनिधि बनी रहना सुनिश्चित हो जिससे ऋण की सभी वैध अपेक्षाएं पूरी होती रहें। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए रिज़र्व बैंक अन्य बातों के साथ-साथ एलएएफ सहित ओएमओ, एमएसएस और नकदी आरक्षित निधि अनुपात (सीआरआर) के माध्यम से चलनिधि के सक्रिय प्रबंधन की नीति अपनाता है और अपने पास उपलब्ध नीतिगत साधनों का उपयोग स्थिति की मांग के अनुसार लोचपूर्वक करता है।

(घ) परिचालनात्मक स्वायत्तता में वृद्धि

1950 के दशक के मध्य में तदर्थ खजाना बिल और स्वमौद्रिकीकरण की प्रणाली उभरने से मौद्रिक नीति संचालन में स्वायत्तता में गंभीर कमी हुई। उक्त प्रणाली में इस बात पर सहमति हुई थी कि रिज़र्व बैंक में रखी अपेक्षित शेष राशि जब भी निर्धारित न्यूनतम सीमा से कम होगी तब रिज़र्व बैंक उसके पक्ष में जारी तदर्थ खजाना बिल बनाकर सरकार के नकदी शेष पूरे करेगा। इस प्रकार, तदर्थ खजाना बिल, जिनका कार्य सरकार की प्राप्तियों और भुगतानों के बीच उभरे अस्थायी असंतुलनों को दूर करना था, संचयी स्वरूप के बन गए

और अंततः सरकारी व्यय के मौद्रिक वित्तपोषण के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में उभरे।

भारतीय रिज़र्व बैंक और सरकार के बीच के संबंध में सितंबर 1994 में महत्वपूर्ण मोड़ आया जब दोनों के बीच एक अनुपूरक समझौता हुआ जिसने प्रारंभ में तदर्थ खजाना बिलों के निवल निर्गम को सीमित कर दिया गया। इस पहल से अंत में तदर्थ खजाना बिलों का प्रचलन अप्रैल 1997 में समाप्त हुआ और इसका स्थान सीमित अर्थोपाय अग्रिमों की व्यवस्था ने ले लिया। इस प्रकार, बजट घाटे के स्वमौद्रिकीकरण की समाप्ति से मौद्रिक नीति का ढांचा मजबूत हो गया जिससे लचीलापन और परिचालनात्मक स्वायत्तता आई।

2003 में राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंधन अधिनियम अधिनियमित करने से अप्रैल 2006 से रिज़र्व बैंक का केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गम में सहभागी होना बंद हो गया। राष्ट्रीय सुरक्षा या राष्ट्रीय आपदा या ऐसी ही अन्य अपवादात्मक स्थिति में ही रिज़र्व बैंक प्राथमिक निर्गम में भाग ले सकता है।

हाल के विधायी संशोधन से सीआरआर के स्तर पर सांविधिक निम्नतम या उच्चतम सीमा की बाधा से निरपेक्ष मौद्रिक प्रबंधन के लिए सीआरआर का लोचपूर्ण उपयोग किया जा सकता है । संशोधन के कारण सांविधिक चलनिधि अनुपात को बैंकों की निवल मांग और मीयादी देयताओं के न्यूनतम 25 प्रतिशत के पूर्ववर्ती सांविधिक स्तर से भी कम किया जा सकता है और इससे चलनिधि के अधिक लोचपूर्ण प्रबंधन के अवसर बढ़ गए हैं।

(ङ) संप्रेषण माध्यमों का सुदृढ़ीकरण

बाजार उन्मुख अर्थव्यवस्था में समन्वित और दक्ष मुद्रा बाजार, सरकारी प्रतिभूति और विदेशी मुद्रा बाजारों के साथ मजबूत भुगतान और निपटान प्रणाली के माध्यम से नीतिगत संकेत प्रसारित किए जाते हैं। अतः, रिज़र्व बैंक विभिन्न बाजारों और साधनों को विकसित, व्यापक और गहन करने के लिए प्रयासरत है। मध्यावधि नीति का लक्ष्य वित्तीय बाजारों को विकसित करते रहना, वित्तीय बाजारों का एकीकरण सुनिश्चित करना और उसके द्वारा मौद्रिक नीति के आवेगों का संप्रेषण करना है। मुद्रा बाजार के क्षेत्र में, रिपो बाजार के अलावा एक दिवसीय और सूचना मुद्रा बाजार, सावधि मुद्रा, वाणिज्यिक पत्र और जमाराशि प्रमाणपत्र बाजारों में सुधार के लिए अनेक उपाय किए गए। मांग/सूचना और सावधि मुद्रा बाजारों में लेनदेन करने के लिए हाल ही में स्क्रीन आधारित, तयशुदा, कोट-ड्रिवन प्रणाली (एनडीएस-काल) भी शुरू की गई है।

सामान्य रूप से वित्तीय बाजारों और विशेष रूप से ऋण बाजारों के विकास का व्यापक हित पूरा करते हुए प्रभावी सार्वजनिक ऋण प्रबंधन और मौद्रिक प्रबंधन दोनों की दृष्टि से सरकारी प्रतिभूति का सुचारू रूप से कार्यरत बाजार आवश्यक है। तदनुसार, सरकारी प्रतिभूति के प्राथमिक और द्वितीयक दोनों बाजारों के विकास के लिए अनेक कदम उठाए गए। इसमें और अधिक विकास की आवश्यकता बढ़ गई है क्योंकि राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंधन अधिनियम के प्रावधानों के अनुसरण में अप्रैल 2006 से केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गम में सहभागी होने से रिज़र्व बैंक पर प्रतिबंध लग गया है। नए माहौल के अनुसार अन्य बातों के साथ ही द्वितीयक बाजार में गहनता और चलनिधि बढ़ाने के उपाय सुझाने के लिए केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों के बाजार पर एक आंतरिक तकनीकी समूह (जुलाई 2005) का गठन किया गया था। उक्त समूह के अनुसार साधनों/प्रक्रिया/सहभागिता के संदर्भ में सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास के लिए मध्यावधि उपाय करने की आवश्यकता है। उक्त सिफारिशों पर चरणबद्ध रूप से कार्रवाई की जा रही है।

भारत में कारपोरेट ऋण बाजार तुलनात्मक रूप से अल्प विकसित है किंतु इसमें संसाधन जुटाने, विशेष रूप से बुनियादी संरचना की परियोजनाओं, आवास क्षेत्र और स्वयं कारपोरेट्स के लिए भी, की भारी क्षमता है। बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों सहित विभिन्न बाजार घटकों, ऋण वृद्धि हेतु बांड बीमा संस्थाओं और बेहतरीन प्रौद्योगिकी सहित तत्काल सकल निपटान (आरटीजीएस) में अधिक पहुंच विकसित करने से भारत में कारपोरेट बांड बाजार के विकास को तेज गति मिलेगी। केंद्रीय बजट 2005-06 में की गई घोषणा के अनुसरण में, कारपोरेट बांड बाजार के विकास में कानूनी, विनियामक, कर और बाजार की रूपरेखा की जांच करने के लिए कारपोरेट बांड और प्रतिभूतिकरण पर उच्चस्तरीय विशेषज्ञ समिति (अध्यक्ष : डॉ. आर.एच.पाटिल) गठित की गई। उक्त समिति की सिफारिशों में जारीकर्ता और निवेशकर्ता आधार बढ़ाना, सूचीकरण और प्रकटीकरण मानदंडों का सरलीकरण, स्टैम्प शुल्क और रोक (विथहोल्डिंग) कर को युक्तियुक्त बनाना, ऋण समेकन, इलेक्ट्रॉनिक ऑर्डर मैचिंग सिस्टम शुरू करके लेनदेन प्रणाली सुधारना, प्रभावी समाशोधन और निपटान प्रणाली, व्यापक रिपोर्टिंग तंत्र, बाजार प्रथाओं और स्व-विनियमन का विकास और प्रतिभूतिकृत ऋण बाजार का विकास शामिल हैं। उक्त सिफारिशें लागू करने संबंधी कार्रवाई शुरू की गई है।

मार्च 1993 में बाजार निर्धारित विनिमय दर प्रणाली में अंतरण और उसके बाद विभिन्न बाह्य लेनदेनों पर प्रतिबंध शिथिल करने, जिसके परिणामस्वरूप 1994 में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष समझौते के अंतर्नियमों के अनुच्छेद VIII के अंतर्गत चालू खाता परिवर्तनीयता सामने आई, से भारतीय विदेशी मुद्रा का बाजार व्यापक और गहन हो गया। भारत में विदेशी मुद्रा बाजार को उदार बनाने और उसका विकास करने पर लक्ष्यित निरंतर प्रयासों के एक भाग के रूप में विदेशी मुद्रा बाजार पर आंतरिक तकनीकी समूह का गठन किया गया था जिसका कार्य था रिज़र्व बैंक द्वारा अब तक किए गए उपायों की व्यापक समीक्षा करना और मध्यावधि रूपरेखा के साथ प्रतिबंधों को और शिथिल करने के क्षेत्रों की पहचान करना। श्री एस.एस.तारापोर की अध्यक्षता वाली पूर्ण पूंजी खाता परिवर्तनीयता पर गठित समिति ने विदेशी मुद्रा बाजार सहित वित्तीय बाजारों के विकास की सिफारिश की है। वर्तमान विनियमों को और शिथिल करके बाजारों के स्वरूप, समन्वय और कुशलता में सुधार करने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं।

(च) भुगतान और निपटान प्रणाली

रिज़र्व बैंक ने भुगतान प्रणाली को सुरक्षित और कार्यक्षम बनाने के लिए अनेक प्रकार के संस्थागत, क्रियाविधिक और परिचालनात्मक उपाय किए हैं। भुगतान और निपटान प्रणाली के विनियमन और पर्यवेक्षण का बोर्ड (बीपीएसएस) नामक संस्था भारतीय रिज़र्व बैंक के केंद्रीय बोर्ड की समिति के रूप में गठित की गई है जिसमें गवर्नर महोदय अध्यक्ष हैं तथा सभी चार उप गवर्नर और दो बाहरी केंद्रीय बोर्ड निदेशक उसके सदस्य हैं। बीपीएसएस विद्यमान और नई उभरने वाली भुगतान और निपटान प्रणाली दोनों के विनियमन और पर्यवेक्षण संबंधी नीति और मानक निर्धारित करता है।

कार्यक्षमता बढ़ाने और जोखिम घटाने के लिए तत्काल सकल निपटान (आरटीजीएस) प्रणाली और अन्य इलेक्ट्रॉनिक भुगतान प्रणालियां बड़े पैमाने पर प्रोत्साहित की जा रही हैं। देश में 70,000 से अधिक बैंक शाखाओं में लगभग 40 प्रतिशत शाखाएं अब आरटीजीएस से युक्त हैं। कुछ समय पहले, रिज़र्व बैंक ने प्रणालीगत महत्वपूर्ण भुगतान प्रणाली के मूल सिद्धांतों के अनुपालन के संबंध में भारत की स्थिति की समीक्षा

की थी। यह देखा गया था कि हमारे यहां पहले मूल सिद्धांत, यथा 'सुस्थापित कानूनी आधार' के सिवाय बाकी सभी मूल सिद्धांतों का अनुपालन सामान्यतः हो रहा था। रिज़र्व बैंक ने भारत सरकार की सहमति से भुगतान और निपटान प्रणाली विधेयक का मसौदा तैयार किया था जो कि संसद के विचाराधीन है। यह विधेयक अधिनियमित होने के बाद न केवल रिज़र्व बैंक को भुगतान प्रणाली के विनियमन और पर्यवेक्षण से संबंधित नीति बनाने का अधिकार मिल जाएगा बल्कि इससे 'नेटिंग' और 'सेटलमेंट फाइनलिटी' को कानूनी मान्यता भी मिल जाएगी।

सूचना प्रौद्योगिकी की महत्वपूर्ण आवश्यकता को देखते हुए और प्रगति जारी रखने और वित्तीय क्षेत्र की आईटी पहलों को दिशा देने के अपने प्रयासों के अंतर्गत रिज़र्व बैंक ने विजन डाक्यूमेंट बनाया जिसमें कारपोरेट गवर्नंस पर आवश्यक फोकस के साथ मध्यावधि में आईटी विकास की योजना का विहगावलोकन किया गया है।

(छ) संस्थागत ढांचे का सुदृढ़ीकरण

रिज़र्व बैंक मौद्रिक नीति बनाने का कार्य सलाहकारी तरीके से करता है। रिज़र्व बैंक का मौद्रिक नीति विभाग बैंक के वरिष्ठ प्रबंधन एवं चुनिंदा वाणिज्य बैंकों और साथ ही औद्योगिक संघों, बाजारों के प्रतिनिधि निकायों और महत्वपूर्ण औद्योगिक समूहों के बीच चर्चा का आयोजन करता है। यह प्रमुख चुनिंदा बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के साथ मासिक बैठकों का आयोजन भी करता है जिससे रिज़र्व बैंक की मौद्रिक, ऋण, विनियामक और पर्यवेक्षी नीतियों संबंधी मामलों के लिए सलाहकारी मंच उपलब्ध हो जाता है। चलनिधि प्रबंधन सहित मुद्रा बाजार के दैनिक कार्यों पर निर्णय वित्तीय बाजार समिति द्वारा लिए जाते हैं जिसमें मौद्रिक नीति और मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति और विदेशी मुद्रा बाजारों से संबंधित कार्यों के लिए उत्तरदायी रिज़र्व बैंक के वरिष्ठ अधिकारी शामिल होते हैं। वित्तीय बाजार प्रतिदिन प्रातः लेनदेन हेतु खुलने पर उप गवर्नर, कार्यपालक निदेशक और मौद्रिक नीति एवं संबंधित बाजार कार्यों के चार विभागों के प्रभारी अधिकारियों की बैठक आयोजित की जाती है और यदि आवश्यक हो, दिन में एक से अधिक बार भी बैठकें आयोजित की जाती हैं।

वित्तीय बाजार समिति की बैठकों के अलावा, मौद्रिक नीति कार्य योजना बैठक प्रति माह एक बार होती है। कार्य योजना बैठकों में मौद्रिक नीति की समीक्षा की जाती है और उन मुख्य अनुमानों और मानकों पर विचार किया जाता है जो मौद्रिक नीति के स्वरूप को प्रभावित कर सकते हैं। इसके अलावा, मुद्रा, विदेशी मुद्रा और सरकारी प्रतिभूति बाजारों पर तकनीकी सलाहकार समिति परामर्शी प्रक्रिया में सहायता देती है । उक्त समिति में निक्षेपागारों और क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों के अधिकारियों सहित विद्वान और वित्तीय बाजार के विशेषज्ञ शामिल होते हैं। इस समिति की बैठक तिमाही में एक बार होती है जिसमें वित्तीय बाजारों से संबंधित संस्थागत प्रथाओं और साधनों से संबंधित प्रस्तावों पर विचार किया जाता है।

मौद्रिक नीति में परामर्शी प्रक्रिया को मजबूत करने के उद्देश्य के अनुसरण में मौद्रिक नीति पर तकनीकी सलाहकार समिति गठित की गई है जिसमें मौद्रिक अर्थशास्त्र, केंद्रीय बैंकिंग, वित्तीय बाजार और सार्वजनिक वित्त के क्षेत्र से चार बाहरी सदस्य लिए गए हैं। उक्त समिति की बैठक वार्षिक नीति के पहले होती है जिसमें वार्षिक नीति की समीक्षा की जाती है। यह समिति समष्टि आर्थिक और मौद्रिक गतिविधियों की समीक्षा करके मौद्रिक नीति के स्वरूप पर सलाह देती है।

(ज) संप्रेषण पर बल देना

बहुविध कार्यों और जटिल अधिदेशों का सामना करने के कारण मौद्रिक नीति के क्षेत्र में भारतीय रिज़र्व बैंक की ओर से स्पष्ट संप्रेषण बहुत महत्वपूर्ण है। हम तीन प्रकार के संप्रेषण पर बल देते हैं, यथा (क) अर्थव्यवस्था का विश्लेषण, (ख) नीतिगत उपाय और (ग) ऐसे नीतिगत उपायों से संबंधित कारण। वस्तुतः, अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुसार, भारतीय रिज़र्व बैंक की संप्रेषण प्रणाली पर्याप्त व्यापक और पारदर्शी है। छमाही नीतिगत वक्तव्य पारंपरिक रूप से भावी छह माह से एक वर्ष के लिए रिज़र्व बैंक का मौद्रिक रुख दर्शाते हैं। जुलाई 2005 से छमाही वक्तव्यों के अलावा तिमाही समीक्षा प्रकाशित करने की प्रणाली भी लागू की गई है। रिज़र्व बैंक के शीर्ष कार्यपालकों के भाषण भी रिज़र्व बैंक की संप्रेषण प्रक्रिया का महत्वपूर्ण भाग हैं। हमने बाजार सहभागियों को सूचना देने के अलावा, अपने विश्लेषण में सहभागिता का मध्य मार्ग चुना है ताकि वे अपना स्वयं का दृष्टिकोण बना सकें। ऐसा करते समय हमें बाजार सहभागियों और भारतीय रिज़र्व बैंक के बीच सूचना और साथ ही दृष्टिकोण के द्विमार्गी संप्रेषण की प्रक्रिया का लाभ मिलता है। स्थायी सलाहकार समितियों और अनौपचारिक/तदर्थ समितियों और तकनीकी /कार्य दलों के माध्यम से औद्योगिक संघों के साथ अनेक औपचारिक ढांचाबद्ध बैठकों से भी द्विमार्गी प्रक्रिया मजबूत हुई है।

(झ) अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम प्रथाओं से अनुरूपण

रिजर्व बैंक ने संस्थाओं, बाजारों और वित्तीय बुनियादी संरचना के विकास और उसकी स्थिरता को संवर्धित करने के लिए उचित अनुकूलन के साथ अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम प्रथाओं पर आधारित बहुविध कार्यनीति अपनाई है। अपने वित्तीय क्षेत्र को अंतरराष्ट्रीय मानकों और सर्वोत्तम प्रथाओं के अनुसार निर्धारित करना हमारे लिए बेहद उपयोगी रहा है। इस संदर्भ में, आइएमएफ सहित विभिन्न स्तर निर्धारक निकायों के अंतरराष्ट्रीय मानक और कोड की स्थिति और उनके कार्यान्वयन के मूल्यांकन का हमारा प्रयास हाल ही की पहलों में मील का पत्थर है जिसने हमें अंतरराष्ट्रीय मानकों की तुलना में अपनी सापेक्षिक स्थिति समझने में मदद की है। वित्तीय मानक और कोड लागू करने का दृष्टिकोण मानकों और कोडों की कार्यक्षमता बढ़ाने के घटक पर आधारित था और उन्हें देशी तथा विदेशी वित्तीय स्थिरता से उनके संबंध की उपेक्षा न करते हुए देश में संस्थागत विकास की प्रक्रिया का एक भाग समझने की आवश्यकता पर आधारित था। इस प्रक्रिया से देशी अर्थव्यवस्था के वस्तुनिष्ठ, स्वतंत्र और 'बाहरी' मूल्यांकन की क्षमता प्राप्त हुई । ऐसे सहभागितायुक्त और परामर्शी दृष्टिकोण को क्रमिकता पर जोर देते हुए प्रोत्साहित किया गया ताकि विभिन्न दृष्टिकोणों को मिलाया जा सके जिससे आवश्यक परिवर्तन शांतिपूर्वक करने का अनुकूल वातावरण निर्मित हो सके।

भारत सरकार ने रिज़र्व बैंक के साथ परामर्श करके वित्तीय स्थिरता का स्वमूल्यांकन करने और विभिन्न मानकों और कोडों की स्थिति और कार्यान्वयन पुनः अद्यतन करने के लिए सितंबर 2006 में फिर से वित्तीय क्षेत्र के मूल्यांकन पर समिति गठित की।

5. निष्कर्षात्मक टिप्पणी

समापन करते समय, स्थिरता के साथ वृद्धि करने में मौद्रिक नीति की भूमिका संबंधी अपने निष्पादन की सुंदर कहानी हम विश्व के सामने रख सकते हैं। तथापि, इस गति को बनाए रखने की चुनौती अब भी है और अधिक महत्वपूर्ण यह है कि इस वृद्धि को लाखों गरीबों

तथा बेरोजगारों के लिए उपयोगी बनाया जाए। किंतु मैं अपने पूर्ववर्ती गवर्नर डॉ.सी.रंगराजन, जो वर्तमान में प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के अध्यक्ष हैं, द्वारा हाल ही में उल्लेख की गई बात का अनुसमर्थन ही कर सकता हूं। उन्होंने ऐसी छह अति महत्वपूर्ण चुनौतियों का उल्लेख किया था जिन पर प्राथमिकता के आधार पर ध्यान देने की आवश्यकता है। ये हैं - कृषि विकास बढ़ाना, बुनियादी संरचना का विकास, राजकोषीय समेकन, सामाजिक बुनियादी संरचना, विशेष रूप से प्राथमिक शिक्षा और आधारभूत स्वास्थ्य, वैश्वीकरण से तालमेल बैठाना और अच्छा प्रबंधन। मौद्रिक नीति का संचालन समष्टि आर्थिक स्थिरता और विशेष रूप से मूल्य और वित्तीय स्थिरता का उपयुक्त वातावरण तैयार करके उक्त क्षेत्रों की निरंतर सहायता करेगा जो वृद्धि के बढ़े हुए स्तर को निश्चित ही सुकर बनाएगा ।